मेरी माँ कहाँ

हिन्दी ADDA

कृष्णा सोबती

मेरी माँ कहाँ

दिन के बाद उसने चाँद-सितारे देखे हैं। अब तक वह कहाँ था? नीचे, नीचे, शायद बहुत नीचे...जहाँ की खाई इनसान के खून से भर गई थी। जहाँ उसके हाथ की सफाई

बेशुमार गोलियों की बौछार कर रही थी। लेकिन, लेकिन वह नीचे न था। वह तो अपने नए वतन की आजादी के लिए लड़ रहा था। वतन के आगे कोई सवाल नहीं, अपना कोई खयाल नहीं! तो चार दिन से वह कहाँ था? कहाँ नहीं था वह? गुजराँवाला, वजीराबाद, लाहौर! वह और मीलों चीरती हुई ट्रक। कितना घूमा है वह? यह सब किसके लिए? वतन के लिए, कौम के लिए और...? और अपने लिए! नहीं, उसे अपने से इतनी मुहब्बत नहीं! क्या लंबी सड़क पर खड़े-खड़े यूनस खाँ दूर-दूर गाँव में आग की लपटें देख रहा है? चीखों की आवाज उसके लिए नई नहीं। आग लगने पर चिल्लाने में कोई नयापन नहीं। उसने आग देखी है। आग में जलते बच्चे देखे हैं, औरतें और मर्द देखे हैं। रात-रात भर जल कर सुबह खाक हो गए मुहल्लों में जले लोग देखे हैं! वह देख कर घबराता थोड़े ही है? घबराए क्यों? आजादी बिना खून के नहीं मिलती, क्रांति बिना खून के नहीं आती, और, और, इसी क्रांति से तो उसका नन्हा-सा मुल्क पैदा हुआ है ! ठीक है। रात-दिन सब एक हो गए। उसकी आँखें उनींदी हैं, लेकिन उसे तो लाहौर पहुँचना है। बिलकुल ठीक मौके पर। एक भी काफिर जिंदा न रहने पाए। इस हलकी-हलकी सर्द रात में भी 'काफिर' की बात सोच कर बलोच जवान की आँखें खून मारने लगीं। अचानक जैसे टूटा हुआ क्रम फिर जुड़ गया है। ट्रक फिर चल पड़ी है। तेज रफ्तार से।

सड़क के किनारे-किनारे मौत की गोदी में सिमटे हुए गाँव, लहलहाते खेतों के आस-पास लाशों के ढेर। कभी-कभी दूर से आती हुई 'अल्ला-हो-अकबर' और 'हर-हर महादेव' की आवाजें। 'हाय, हाय'...'पकड़ो-पकड़ो'...मारो-मारो'...। यूनस खाँ यह सब सुन रहा है। बिलकुल चुपचाप। इससे कोई सरोकार नहीं उसे। वह तो देख रहा है अपनी आँखों से एक नई मुगलिया सल्तनत शानदार, पहले से कहीं ज्यादा बुलंद...।

चाँद नीचे उतरता जा रहा है। दूध-सी चाँदनी नीली पड़ गई है। शायद पृथ्वी का रक्त ऊपर विष बन कर फैल गया है।

'देखो, जरा ठहरो।' यूनस खाँ का हाथ ब्रेक पर है। यह यह क्या? एक नन्ही-सी, छोटी-सी छाया ! छाया? नहीं, रक्त से भीगी सलवार में मूर्च्छित पड़ी एक बच्ची!

बलोच नीचे उतरता है। जख्मी है शायद! मगर वह रुका क्यों? लाशों के लिए कब रुका है वह? पर यह एक घायल लड़की...। उससे क्या? उसने ढेरों के ढेर देखे हैं औरतों के...मगर नहीं, वह उसे जरूर उठा लेगा। अगर बच सकी तो...तो...। वह ऐसा क्यों कर रहा है यूनस खाँ खुद नहीं समझ पा रहा...। लेकिन अब इसे वह न छोड़ सकेगा...काफिर है तो क्या?

बड़े-बड़े मजबूत हाथों में बेहोश लड़की। यूनस खाँ उसे एक सीट पर लिटाता है। बच्ची की आँखें बंद हैं। सिर के काले घने बाल शायद गीले हैं। खून से और, और चेहरे पर...? पीले चेहरे पर...रक्त के छींटे।

यूनस खाँ की उँगलियाँ बच्ची के बालों में हैं और बालों का रक्त उसके हाथों में...शायद सहलाने के प्रयत्न में! पर नहीं, यूनस खाँ इतना भावुक कभी नहीं था। इतना रहम, इतनी दया उसके हाथों में कहाँ से उतर आई है? वह खुद नहीं जानता। मूर्च्छित बच्ची ही क्या जानती है कि जिन हाथों ने उसके भाई को मार कर उस पर प्रहार किया था उन्हीं के सहधर्मी हाथ उसे सहला रहे हैं!

यूनस खाँ के हाथों में बच्ची...और उसकी हिंसक आँखें नहीं, उसकी आर्द्र आँखें देखती हैं दूर कोयटे में एक सर्द, बिलकुल सर्द शाम में उसके हाथों में बारह साल की खूबसूरत बहिन नूरन का जिस्म, जिसे छोड़ कर उसकी बेवा अम्मी ने आँखें मूँद ली थीं।

सनसनाती हवा में कब्रिस्तान में उसकी फूल-सी बहिन मौत के दामन में हमेशा-हमेशा के लिए दुनिया से बेखबर...और उस पुरानी याद में काँपता हुआ यूनस खाँ का दिल-दिमाग।

आज उसी तरह, बिलकुल उसी तरह उसके हाथों में...। मगर कहाँ है वह यूनस खाँ जो कत्ले-आम को दीन और ईमान समझ कर चार दिन से खून की होती खेलता रहा है...कहाँ है? कहाँ है?

यूनस खाँ महसूस कर रहा है कि वह हिल रहा है, वह डोल रहा है। वह कब तक सोचता जाएगा। उसे चलना चाहिए, बच्ची के जख्म !...और फिर, एक बार फिर थपथपा कर, आदर से, भीगी-भीगी ममता से बच्ची को लिटा यूनस खाँ सैनिक की तेजी से ट्रक

स्टार्ट करता है। अचानक सूझ जानेवाले कर्तव्य की पुकार में। उसे पहले चल देना चाहिए था। हो सकता है यह बच्ची बच जाए...उसके जख्मों की मरहम-पट्टी। तेज, तेज और तेज ! ट्रक भागी जा रही है। दिमाग सोच रहा है वह क्या है? इसी एक के लिए क्यों? हजारों मर चुके हैं। यह तो लेने का देना है। वतन की लड़ाई जो है! दिल की आवाज है चुप रहो...इन मासूम बच्चों की इन कुरबानियों का आजादी के खून से क्या ताल्लुक? और नन्ही बच्ची बेहोश, बेखबर...

लाहौर आनेवाला है। यह सड़क के साथ-साथ बिछी हुई रेल की पटरियाँ। शाहदरा और अब ट्रक लाहौर की सड़कों पर है। कहाँ ले जाएगा वह? मेयो हास्पिटल या सर गंगाराम?...गंगाराम क्यों? यूनस खाँ चौंकता है। वह क्या उसे लौटाने जा रहा है? नहीं, नहीं, उसे अपने पास रखेगा। ट्रक मेयो हास्पिटल के सामने जा रुकती है।

और कुछ क्षण बाद बलोच चिंता के स्वर में डाक्टर से कह रहा है, 'डाक्टर, जैसे भी हो, ठीक कर दो...इसे सही सलामत चाहता हूँ मैं !' और फिर उत्तेजित हो कर, 'डाक्टर, डाक्टर...' उसकी आवांज संयत नहीं रहती।

'हाँ, हाँ, पूरी कोशिश करेंगे इसे ठीक करने की।'

बच्ची हास्पिटल में पड़ी है। यूनस खाँ अपनी डयूटी पर है, मगर कुछ अनमना-सा हैरान फिकरमंद। पेट्रोल कर रहा है।

लाहौर की बड़ी-बड़ी सड़कों पर। कहीं-कहीं रात की लगी हुई आग से धुआँ निकल रहा है। कभी-कभी डरे हुए, सहमे हुए लोगों की टोलियाँ कुछ फौजियों के साथ नजर आती हैं। कहीं उसके अपने साथी शोहदों के टोलों को इशारा करके हँस रहे हैं। कहीं कूड़ा-करकट की तरह आदमियों की लाशें पड़ी हैं। कहीं उजाड़ पड़ी सड़कों पर नंगी औरतें, बीच-बीच में नारे-नारे, और ऊँचे! और यूनस खाँ, जिसके हाथ कल तक खूब चल रहे थे, आज शिथिल हैं। शाम को लौटते हुए जल्दी-जल्दी कदम भरता है। वह अस्पताल नहीं, जैसे घर जा रहा है।

एक अपरिचित बच्ची के लिए क्यों घबराहट है उसे? वह लड़की मुसलमान नहीं, हिंदू है, हिंदू है।

दरवाजे से पलंग तक जाना उसे दूर, बहुत दूर जाना लग रहा है। लंबे लंबे डग।

लोहे के पलंग पर बच्ची लेटी है। सफेद पट्टियों से बँधा सिर। किसी भयानक दृश्य की कल्पना से आँखें अब भी बंद हैं। सुंदर-से भोले मुख पर डर की भयावनी छाया...।

यूनस खाँ कैसे बुलाए क्या कहे? 'नूरन' नाम ओठों पर आके रुकता है। हाथ आगे बढ़ते हैं। छोटे-से घायल सिर का स्पर्श, जिस कोमलता से उसकी उँगलियाँ छू रही हैं उतनी ही भारी आवाज उसके गले में रुक गई है।

अचानक बच्ची हिलती है। आहत-से स्वर में, जैसे बेहोशी में बड़बड़ाती है

'कैंप, कैंप...कैंप आ गया। भागो...भागो...भागो...'

'कुछ नहीं, कुछ नहीं देखो, आँखें खोलो...'

'आग, आग...वह गोली...मिलटरी...'

बच्ची उसे पास झुके देखती है और चीख मारती है...

'डाक्टर, डाक्टर...डाक्टर, इसे अच्छा कर दो।'

डाक्टर अनुभवी आँखों से देख कर कहता है, 'तुमसे डरती है। यह काफिर है, इसीलिए।'

काफिर...यूनस खाँ के कान झनझना रहे हैं, काफिर...काफिर...क्यों बचाया जाए इसे? काफिर?...कुछ नहीं...मैं इसे अपने पास रखूँगा!

इसी तरह बीत गईं वे खूनी रातें। यूनस खाँ विचलित-सा अपनी डयूटी पर और बच्ची हास्पिटल में।

एक दिन। बच्ची अच्छी होने को आई। यूनस खाँ आज उसे ले जाएगा। डयूटी से लौटने के बाद वह उस वार्ड में आ खड़ा हुआ।

बच्ची बड़ी-बड़ी आँखों से देखती है। उसकी आँखों में डर है, घृणा है और, और, आशंका है।

यूनस खाँ बच्ची का सिर सहलाता है, बच्ची काँप जाती है! उसे लगता है कि हाथ गला दबोच देंगे। बच्ची सहम कर पलकें मूँद लेती है! कुछ समझ नहीं पाती कहाँ है वह? और यह बलोच?...वह भयानक रात! और उसका भाई! एक झटके के साथ उसे याद आता है कि भाई की गर्दन गँड़ासे से दूर जा पड़ी थी!

यूनस खाँ देखता है और धीमे से कहता है, 'अच्छी हो न ! अब घर चलेंगे!'

बच्ची काँप कर सिर हिलाती है, 'नहीं-नहीं, घर...घर कहाँ है! मुझे तुम मार डालोगे।'

यूनस खाँ देखना चाहता था नूरन, लेकिन यह नूरन नहीं, कोई अनजान है जो उसे देखते ही भय से सिकुड़ जाती है।

बच्ची सहमी-सी रुक-रुक कर कहती है, 'घर नहीं, मुझे कैंप में भेज दो। यहाँ मुझे मार देंगे...मुझे मार देंगे...'

यूनस खाँ की पलकें झुक जाती हैं। उनके नीचे सैनिक की क्रूरता नहीं, बल नहीं, अधिकार नहीं। उनके नीचे है एक असहय भाव, एक विवशता...बेबसी।

बलोच करुणा से बच्ची को देखता है। कौन बचा होगा इसका? वह इसे पास रखेगा। बलोच किसी अनजान स्नेह में भीगा जा रहा है...

बच्ची को एक बार मुस्कराते हुए थपथपाता है, 'चलो चलो, कोई फिक्र नहीं, हम तुम्हारा अपना है...'

ट्रक में यूनस खाँ के साथ बैठ कर बच्ची सोचती है, बलोच कहीं अकेले में जा कर उसे जरूर मार देनेवाला है...गोली से, छुरे से ! बच्ची बलोच का हाथ पकड़ लेती है, 'खान, मुझे मत मारना...मारना मत...' उसका सफेद पड़ा चेहरा बता रहा है कि वह डर रही है।

खान बच्ची के सिर पर हाथ रखे कहता है, 'नहीं-नहीं, कोई डर नहीं...कोई डर नहीं...तुम हमारा सगा के माफिक है...।'

एकाएक लड़की पहले खान का मुँह नोचने लगती है फिर रो-रो कर कहती है, 'मुझे कैंप में छोड़ दो, छोड़ दो मुझे।'

खान ने हमदर्दी से समझाया, 'सब्र करो, रोओ नहीं...तुम हमारा बच्चा बनके रहेगा। हमारे पास।'

'नहीं...' लड़की खान की छाती पर मुट्ठियाँ मारने लगी, 'तुम मुसलमान हो...तुम...।'

एकाएक लड़की नफरत से चीखने लगी, 'मेरी माँ कहाँ है! मेरे भाई कहाँ हैं! मेरी बहिन कहाँ...'